International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 12 Issue 1, January-February, 2024, Impact Factor: 8.376

हरिशंकर परसाई और शरद जोशी के साहित्य में राजनीतिक.आर्थिक विसंगतियाँ का अध्ययन

Sonam Chhari[1], Dr. Hari Vilas Singh[2]

[1]Research Scholar, Sunrise University Alwar
[2]Associate Professor, Sunrise University Alwar Raj

सारांश

हरिशंकर परसाई और शरद जोशी जिस भारतीय समाज से संबंध् रखते हैं वह सीध वैदिक समाज व्यवस्था से जुड़ा है। जब यह व्यवस्था पुराण और स्मृतियों के समय से गुजरती हुई आध्ुनिक परिवेश में आती है तो उसमें कुछ मौलिक परिवर्तन होते हैं। परंपरागत वैदिक समाज का वर्ण-विभाजन जो कभी श्रम-विभाजन पर आधरित था, वह जाति-व्यवस्था के रूप में एक समस्या बन भारतीय समाज में व्याप्त हो गया। इसी प्रकार समय के साथ कुछ प्रथाएं और रीति-रिवाज भी अपनी उपयोगिता खोकर समाज के गले में मरे सांप की तरह बनी रही हैं। दोनों व्यंग्यकारों ने अपने इस समाज में व्याप्त असंगतियों-विसंगतियों के विभिन्न रूपों का उद्घाटन व्यंग्य शैली से किया है। समाज की सबल व्यवस्था के द्वारा कमजोर वर्ग का शोषण करने वाले तेवरों को उन्होंने बड़ी निकटता से देखा था। इस प्रकार दोनों साहित्यकारों का समाज-बोध उनके परिवार, परिवेश और उनके समय से ही आकार लेता है।

मुख्य शब्दः परिवार, परिवेश, भारतीय, असंगतियों-विसंगतियों, व्यंग्य

परिचय

परसाई जी का स्वभाव ही ऐसा था जो परिस्थितियों, भ्रश्टाचारों और बुराईयों को चुपचाप सहन नहीं करते थे। अपने इसी स्वभाव के कारण ही वे समाज में समायोजन नहीं कर सके। समायोजन न करने के कारण अनेक लाभों से वंचित रह गये। नौकरियों को छोड़ने और आर्थिक विपन्नता आने का मुख्य कारण यही था। परिस्थितियाँ कैसी भी हो उन्होंने अपने व्यक्तित्व के साथ कभी समझौता नहीं किया। वे उसके प्रति हमेशा सचेत थे। शायद इसी का ही परिणाम रहा होगा कि उनके ऊपर दुःख बार-बार आक्रमण करते रहे। लेकिन वे दुःखों से पीछे नहीं हटे। वे समाज में असहायों, मजदूरों और शोशितों की एक बड़ी संख्या देखकर अपने व्यक्तित्व को समश्टि में मिला दिया। उन्होंने स्वयं कहा है- ''जल्दी ही मैं व्यक्तिगत दुःख के सम्मोहन जाल से निकल गया। मैंने अपने को विस्तार दे दिया। दुःखी और भी हैं, अन्याय पीड़ित और भी हैं। अनगिनत शोशित हैं, मैं उसमें से एक हूँ। पर मेरे हाथ में कलम है और मैं चेतना सम्पन्न हूँ।'' इस प्रकार हिन्दी साहित्य में एक प्रखर व्यंग्य लेखक का जन्म हुआ जो अपने दुःखमय, भोगे हुए यथार्थ, प्रबुद्धता, बुलन्द हौसले और दृढ़ आसक्ति को अपनी लेखनी में उतारा। साहित्यकार अपनी निजता को अभिव्यक्त कर देता है। जब कोई विचार हमारे मस्तिश्क में आता है तो वह हमारा मानसिक सृजन आरम्भ करने लगता है। क्रोचे इसी मानसिक सृजन को वास्तविक सृजन मानते हैं। रही बात विचार की तो वे सभी को आते हैं और अनुभूति भी सभी को होती है किन्तु सृजनात्मक अभिव्यक्ति सब नहीं कर पाते। परसाई जी का पूरा लेखन समझौता नहीं किए, परिस्थितियाँ सदैव उनके प्रतिकूल ही रही, आर्थिक स्थिति भी उनकी हमेशा ठीक नहीं थी। वे हमेशा मध्यमवर्गीय जीवन व्यतीत करते हुए लेखनरत रहे। अपनी मानवीय करूणा, सामाजिक चेतना तथा जागरुकता का जितना बड़ा मूल्य उन्होंने चुकाया, शायद ही किसी लेखक ने

चुकाया होगा। उन्होंने कभी भौतिक सुखों की चिन्ता नहीं की। यदि वे चाहते तो भौतिक सुखों में लिप्त रहकर मार्क्सवादी विचारधारा का प्रस्तुतीकरण कर सकते थे किन्तु ऐसा शायद उनके जीवन-मूल्यों के खिलाफ था। परसाई जी कभी एसी0, कार, बंगला और अन्य सुविधा के साधन के लिए लेखन कार्य नहीं किया। अंत तक उनके पैर उसी भूमि पर टिके हुए थे जहाँ से वे चलकर आये थे। वे सर्वहारा वर्ग के मसीहा थे तथा उन्होंने सर्वहारा को हमेशा समर्थन प्रदान किया। यदा कदा उनके ऊपर हमला भी हुआ। परसाई जी पर आर0एस0एस0 द्वारा किया गया हमला इसी का प्रतीक है।इस हमले से परसाई जी टूटे नहीं उनकी लेखनी की शक्ति कम नहीं हुई अपितु और भी उत्साह के साथ इनकी विसंगतियों का अंकन करने लगे। हिन्दी गद्य साहित्य में कबीर को कोई यदि जिन्दा रखा तो वे हरिशंकर परसाई जी ही है। वे कबीर के सच्चे अनुयायी थे। वे कबीर द्वारा कही गयी उक्ति ''जो घर फूँके आपनो चले हमारे साथ'' को सही ठहराते हैं।

हरिशंकर परसाई हमेशा कमजोरों का साथ दिया। उनकी लेखन से कुछ स्वार्थी तथा अलगाववादी तत्त्व इस कदर आहत हुए कि वे उनका विरोध करने और उनकी शक्ति को कम करने का प्रयास करने लगे। किन्तु वे स्वार्थी पूँजीवादी, सामन्तवादी, अलगाववादी शक्तियों का कभी पक्ष नहीं लिया। उनकी पक्षधरता हमेशा गरीबों, असहायों एवं दलितों के प्रति थी।

उनको कभी भी कहीं भी किसी भी प्रकार की स्वार्थ-अन्धता तथा विसंगति सह्य नहीं थी, वह उन पर प्रहार करके उसे आमूल नश्ट करना चाहते थे। वे पूँजीपतियों, अलगाववादियों और शोशकों का विरोध इसलिए कर सके क्योंकि कबीर की भाँति वे 'मुझ-सा बुरा न कोय' कहते हुए रूढ़ियों को तोड़ते हैं। वे अपने साथ पूरे वर्ग की आलोचना करते हुए हैं- ''मैं काफी बेहुदा हूँ, मैं पहुँचते ही आयोजकों के चेहरों, व्यवहार और आवभगत से हिसाब लगाना शुरू कर देता हूँ कि ये अच्छे पैसे देंगे या नहीं?''

वे कबीर के जीवनानुभवों से सीधे जुड़े थे वे धर्म-निरपेक्षता के सच्चे प्रतीक थे। परसाई जी कबीर की तरह दुनिया को देखा और उनकी अक्खड़ता को पूरी तरह से आत्मसात किया। उन्होंने पूँजीवादियों की शोशक मनोवृŸा पर चोट की। ''पर आज छापाखाना बीच में आ गया और बीच में आ गये छापेखाने के मालिक, जो धन-दौलत और पार्टीगत स्वार्थ भूल-भुलैया में परसाई की उस वाणी को फटकने नहीं देते जो वास्तव में परसाई को कबीर बनने में समर्थ हुई है। इस कबीर के कितने 'सुनो भई साधो' के कालम छापने से रूक गये। क्योंकि छापे खाने का मालिक इस कबीर की फक्कड़ता को झेल नहीं सकता है।''13

कबीर एक रचनाकार के रूप में परसाई जी के साथी रहे। कबीर जैसा विराट व्यक्तित्व उनके व्यक्तित्व में पूरी तरह समाहित हैं। यह भी कहा गया है कि ''परसाई साहित्य के दूसरे कबीर हैं जो धर्म, राजनीति एवं व्यवस्था की विद्रूपता को बिना किसी खटके के साथ समाज के समक्ष रखते हैं।''

परसाई जी कबीर से इनते प्रभावित थे कि वे अपने कालम का शीर्शक उनके पदों से लेकर लिखें। उनके कुछ शीर्शक के नाम इस प्रकार हैं- 'कबिरा खड़ा बाजार में', 'सुनो भाई साधो', तथा 'माटी कहे कुम्हार' आदि।

परसाई जी की अभिव्यक्ति कबीर की कुछ पंक्तियों से ही होती थी। वे उनके पदों को जब तब दुहराते रहते थे। उन्होंने कबीर की परम्परा को आगे बढ़ाया। परसाई जी स्वयं को कबीर की परम्परा से जोड़ते हुए कहते हैं-

''कबीरदास ने काफी जतन से 'चदरिया' ओढ़ी, फिर भी कहीं-कहीं फट गयी हो तो मेरे स्थान पर आने वाले अधिक सक्षम साथी उसे रफू कर लेंगे।

''परसाई जी कबीर से प्रभावित तो थे ही साथ ही वे मार्क्स से भी उतने ही प्रभावित थे। मार्क्स के क्रान्ति का सिद्धान्त का समर्थन करते हुए कहा है कि जब पुरानी सामजिक व्यवस्था के समय में एक नयी सामाजिक व्यवस्था परिपक्व हो जाती है तब उसके जन्म के लिए शक्ति-रूपी धाय की आवश्यकता अनिवार्य हो जाती है।''

मार्क्स श्रम की महŸा को महŸवपूर्ण मानता है। बिना श्रम के उत्पादन सम्भव नहीं है। उत्पादन कभी भी अकेले नहीं किया जा सकता है, वह आपसी सहयोग पर निर्भर है। मार्क्स व्यक्ति की स्वतंत्र एवं समाज-निरपेक्ष स्थिति को स्वीकार्य नहीं करता। हमेशा ही समाज में पुराने मूल्यों का विध्वंस और नये मूल्यों की स्थापना होती रहती है। समाज का विकास उसके अन्तर्विरोधों से ही होता है। आधुनिक युग में पूँजीवादी और सर्वहारा इन दोनों के मध्य सदैव संघर्श चल रहा है। इसी संघर्श से समाज का विकास और परिवर्तन होता रहा है।

2. उद्देश्य / अध्ययन की आवश्यकता
अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं
1. सामाजिक दृष्टिकोण व्यवस्था और समाज में व्याप्त विसंगतियाँ का अध्ययन
2. हरिशंकर परसाई और शरद जोशी के साहित्य में राजनीतिक-आर्थिक विसंगतियाँ का अध्ययन
3. शोध कार्यप्रणाली

अनुसंधान पद्धति अनुसंधान समस्या को व्यवस्थित रूप से हल करने का एक तरीका है। जिसे वैज्ञानिक रूप से शोध कैसे किया जायेगा, इसका अध्ययन करने के लिए विज्ञान के रूप में समझा जायेगा। शोध अध्ययन वर्तमान शोध, उद्देश्यों और अध्ययन की प्रक्रियाओं को संचालित करने के लिए उपयोग की जाने वाली पद्धति और प्रक्रिया पर प्रकाश डालेगा। अनुसंधान किसी भी प्रकार की अस्पष्टता को कम करता है और परिणाम में स्पष्टता लाता है और इस प्रकार अध्ययन के लिए अपने लक्ष्यों और उद्देश्यों की योजना बनाने में सहायक हो जाता है। प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य हरिशंकर परसाई और शरद जोशी के परिवेश और रचनाधर्म का साहित्य में युगबोध का तुलनात्मक अध्ययन से संबंधित होगा।

अनुसंधान प्रकार
विश्लेषण का उद्देश्य अध्ययन में डेटा के सार को परिभाषित करना होगा। डेटा की प्रकृति को देखते हुए, वर्तमान में चल रहे कार्य में गुणात्मक सह मात्रात्मक पहलू होंगे, लेकिन मुख्य रूप से पहलू में मात्रात्मकता होगी, क्योंकि इस विश्लेषण के अधिकांश निष्कर्ष

मात्रात्मक उपायों पर केंद्रित होंगे। शोधकर्ता द्वारा शोध समस्या के परिणामों पर अध्ययन किया जायेगा, जिसमें गुणात्मक विश्लेषण को भी परिभाषित किया जायेगा।

नमूना डिजाइन

शोध कार्य के कुछ मामलों में, पूरे शोध का विश्लेषण करना लगभग असंभव होगा; इसलिए शोध नमूने का उपयोग करना ही एकमात्र विकल्प होगा। वर्तमान शोध का एक ही उद्देश्य होगा, शोध कार्य के विश्लेषण का नमूना तय करने की प्रक्रिया, प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य हरिशंकर परसाई और शरद जोशी के परिवेश और रचनाधर्म का साहित्य में युगबोध का तुलनात्मक अध्ययन से संबंधित होगा।

4. परिणाम एवं चर्चा

विरोधी सामाजिक परिस्थितियों, विदूरप व्यवहार और असंगति की प्रतिक्रिया से व्यंग्य उत्पन्न होता है। व्यंग्य का रचनानुभव इन्हीं से उत्पन्न होता है। उसमें "विस्तार" रचना के गहन स्तरों पर होता है, लेकिन यह विचार रचनाकार की संवेदनशील प्रतिबद्धता और मानवीय पक्ष से जुड़ा है। व्यंग्य की धार औजार की धार से भी तेज है। दुर्भाग्य से, व्यंग्य को समझने की कोशिश नहीं की जाती, जो लगभग हर शाब्दिक रचना पर हावी है।

विचारपूर्ण प्रतिक्रिया और उसमें शामिल "सामाजिक आलोचना" व्यंग्य की आंतरिक रचना प्रक्रिया को शेष रचना प्रक्रिया से अलग करती है। अब यह जानना अधिक महत्वपूर्ण है कि उपरोक्त सामाजिक प्रतिक्रिया का असली कारण क्या है? और व्यंग्य के माध्यम से उनकी सामाजिक आलोचना कैसे हो सकती है? इन्हीं भौतिक और मूल्यगत विरोधों के संघर्ष में व्यंग्य बनता है। सामन्तवाद भौतिक रूप से वैश्विक मानवता के दृष्टिकोण से एक बीती सच्चाई है, लेकिन मूल्यों और नैतिकता की दृष्टि से आज भी कई देश सामन्तवादी हैं, भारत इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।

वस्तुजगत और सामाजिक व्यवहार के प्रति रचनाकार की संवेदनशील और विचारपूर्ण प्रतिक्रिया व्यंग्य की चेतना से जुड़ी हुई है। व्यंग्य की रचना प्रक्रिया अन्य रचना अनुभवों से बिल्कुल अलग नहीं है; यह सिर्फ कोमल और भावपूर्ण भावों का काव्यात्मक अनुभव नहीं है। उससे एकान्तिक अनुभूतियाँ नहीं होती, बल्कि सामाजिक व्यवहार और परिस्थितियों पर तीव्र प्रतिक्रिया होती है।

विरोधाभासपूर्ण समाज और अलग-अलग मूल्यों वाले लोगों के कारण व्यंग्य संभव है। इन परिस्थितियों में व्यंग्य की अन्तर्निहित सामाजिक प्रतिक्रिया होती है, और व्यंग्य का अर्थ इन्हीं भौतिक मानसिक परिस्थितियों की आलोचना में निहित होता है; एक व्यंग्यकार खुद प्रकृति के साथ व्यंग्य करता है, और दूसरा व्यंग्यकार।

व्यंग्य मानवीय सामाजिक विरोधों, विदूरपताओं और असंगति पर हमला करता है। व्यंग्य निश्चित रूप से एक पक्ष होता है और इसका प्रतिपक्ष भी होता है; इसमें कोई "तटस्थता" नहीं होती। पक्ष और प्रतिपक्ष व्यंग्य को बनाने की प्रक्रिया महत्वपूर्ण है। व्यंग्यकार पक्ष-प्रतिपक्ष का विश्लेषण नहीं कर सकता। लोगों को सिर्फ मजाक उड़ाया जा सकता है। व्यंग्य बुराइयों को समाज में फैलाने और उनसे निपटने की शक्ति देता है; व्यंग्य जीवन की विसंगतियों को उजागर करता है। कबीर को इन मार्क्सवादी विचारकों ने कवि नहीं मानना चाहा था, हालांकि व्यंग्य को साहित्य की 'शेड्यूल कास्ट' विद्या माना जाता है।व्यंग्य का एक लाभ यह है कि यह पाठकों को बताता है कि राजनीतिक और सांस्कृतिक मूल्यों में किसकी ओर झुकाना चाहिए (1)। व्यंग्य लेख पढ़ने से "अपना पक्ष" चुनना आसान हो जाता है। यह पक्ष आडम्बर के खिलाफ है और नैतिकता का पक्षधर है। व्यंग्य की रचनाओं से आम पाठक भी चौकन्ना हो जाते हैं। इसलिए वह और भी सावधान है कि व्यंग्य का शिकार होगा अगर वह भ्रष्टाचार में भाग लिया या उसका समर्थन किया। इसलिए वह भयभीत होकर व्यंग्य लेखन या व्यंग्य मूल्यां की पाली में आ जाता है। व्यंग्य की यही शक्ति हमेशा एक स्वस्थ और जागरूक समाज का निर्माण करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

मार्क ने लिखा है कि भूखे कुछ को रोटी खिलाने पर वह उसे नहीं काटेगा; यह खास अंतर है कि मनुष्य और कुछ में. व्यंग्य में हँसी आना जरूरी नहीं है। इस कथन में हँसी नहीं आती, लेकिन व्यंग्य इतनी गहरी चोट लगाता है कि पाठक पहले भौंचक रह जाता है और फिर विचार करने लगता है। व्यंग्य की हँसी अलग तरह की होती है। परसाई ने कहा, "यहाँ सहज ही यह सवाल उठाया जा सकता है कि मैं व्यंग्य को आखिर इतना केंद्रीय महत्व क्यों दे रहा हूँ?" वास्तव में, व्यंग्य आजादी के बाद नवरूमानी उत्थान की यह एक "ऐण्टी थीसिस" है, और व्यंग्य के बिना स्वतंत्र जीवन के कई महत्वपूर्ण पहलू चित्रित नहीं किए जा सकते हैं। आजादी के बाद के व्यामोह, सामाजिक पाखण्ड और राजनीतिक दोगलेपन को उधेड़ने के लिए व्यंग्य के पैने तश्तरों की जरूरत है। वास्तव में, व्यंग्य एक ऐसा प्रभावी हथियार है जो तमाम मतभेदों को उभारता है और उनकी तीक्ष्ण आलोचना करता है, साथ ही बड़ी तानाशाही और अमानवीय क्रूरता का सामना करने का नैतिक साहस भी दिखाता है।''

व्यंग्य की परिभाशा:-

हिन्दी साहित्य की तरह, काव्यशास्त्र में व्यंग्य को एक अलग विधा के रूप में नहीं बताया गया है। वहाँ व्यंग्य और हास्य दोनों एक ही तरह से तौला जाता रहा। व्यंग्य को थोड़ा-बहुत समझा गया था, लेकिन विद्वानों ने इसे इतना व्यापक रूप से नहीं समझा कि इसे एक विधा के रूप में मानना चाहिए जो अपनी अभिव्यक्ति से ऐसे काम कर सकता है जो अन्य विधाओं द्वारा नहीं हो सकता।

आधुनिक हिंदी साहित्य में व्यंग्य लगभग आम हो गया है। चेतना और प्रगतिशीलता के कारण, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रताप नारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त और बालकृष्ण भट्ट जैसे लेखकों ने व्यंग्य का प्रयोग बराबर किया है। इन लेखकों द्वारा इस युग में व्यंग्य की गंभीर जीवन दृष्टि का आरम्भ हुआ था, वह अपने आप में बड़ी उपलब्धि रही है। दरअसल, व्यंग्य को आज की दुनिया में एक महत्वपूर्ण विधा माना जा रहा है। बीसवीं शताब्दी के गद्य में कई विधाओं, शैलियों और जीवन-दृष्टियों का जन्म और विकास हुआ। राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दबावों सहित आज की सभ्यता ने हमारे जीवन पर काफी असर डाला है। विभिन्न परिस्थितियों में, लेखक या रचनाकार वस्तुओं के बीच संबंधों की खोज में ज्यों-ज्यों प्रवीण होता गया, उसका विश्लेषण वैज्ञानिक होता गया। रचनाकार ने सामाजिक विसंगति, विद्रूरूपता और रूढ़िवादिता को दूर करने और न्याय और समता के आधार पर एक नवीन समाज को प्रतिष्ठित करने के लिए व्यंग्य का उपयोग किया, जिसमें व्यंग्य सबसे महत्वपूर्ण है।

विद्वानों ने व्यंग्य को परिभाषित करने में एकमत नहीं रहे। शायद यही कारण है कि इसके प्रयोजन या महत्व पर जो कुछ कहा गया है, उसमें हास्य और व्यंग्य को एक ही दृष्टि से देखा जाता है। विभिन्न पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों ने व्यंग्य को परिभाषित किया है; कुछ भारतीय विद्वानों ने व्यंग्य को हास्य के एक प्रभेद के रूप में माना था, लेकिन आज हम इसे हास्य के एक प्रभेद के रूप में नहीं मान सकते। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषा में कहीं-कहीं समता और विषमता होती है। भारतीय विद्वानों ने, हालांकि पूरी तरह से नहीं, पाश्चात्य विद्वानों से प्रभावित किया है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाओं में लगभग समान गुण हैं, लेकिन दोनों की परिभाषाएं अलग-अलग प्रस्तुत की जाती हैं।

पाश्चात्य समीक्षक एवं रचनाकार की दृश्टि में व्यंग्य:-

हिन्दी समीक्षा में व्यंग्य के व्यपदेश को समझने के लिए सटायर के विषय में पाश्चात्य विचारकों के विचारों और परिभाषाओं को जानना महत्वपूर्ण है क्योंकि व्यंग्य की अवधारणा अंग्रेजी से आई है। व्यंग्यकार नैतिकता का ठेकेदार होता है, कहते हैं प्रसिद्ध आलोचक मेरिडिथ। बहुधा समाज की गंदगी की सफाई करता है; इसलिए, उसका काम सामाजिक विकृतियों की गंदगी को साफ करना है।इस परिभाषा में सिर्फ दो बातों पर जोर दिया गया हैः अनीति और नैतिकता। साथ ही, परिभाषा का मुख्य उद्देश्य समाज का एक हिस्सा सुधारना है। सामाजिकता भी इससे जुड़ा हुआ एक प्रश्न है। इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार व्यंग्य हास्यापद या असामान्य के प्रति हँसी उड़ना अथवा क्षोभ के भावों की सशक्त अभिव्यक्ति है। उसके साहित्यिक गुण और हंस आवश्यक हैं। हास्यहीन व्यंग्य गाली-गलौज और साहित्यिक विधा के रूप में व्यंग्य को भड़काता है।4. व्यंग्य लेखक जनता को जागरूक करने के लिए व्यंग्य लिखता है। उसके केंद्र में लोगों की संवेदना है। व्यंग्यकार भी आवश्यकता पर नहीं छोड़ता। आर्थर पोलार्ड ने व्यंग्यकार के इसी विषय पर लिखा, "इसका उद्देश्य अपने पाठकों को निन्दा और आलोचना में प्रवृŸा होने के लिए जगाना है और यह काम उन्हें परिहास और अभिहस्य, अपमान, क्रोध और घृणा की विविध भावात्मक अवस्थाओं में भटकाकर पूरा करता है।"5. जोनाथन स्विफ्ट ने कहा, "मैं मनुष्य को अपमानित करने के लिए लिखता हूँ और उसे नीचा दिखाने के लिए।"लेकिन मार्क ट्वेन ने इसके विपरीत कहा, "मैं बुनियादी तौर पर एक शिक्षक हूँ।" सच्चा व्यंग्य लेखक व्यक्ति को नीचा दिखाना नहीं चाहता, मुझे लगता है।6. "आक्सफोर्ड इग्लिश डिक्शनरी" के अनुसार, व्यंग्य "वह पद्यमय अथवा गद्य रचना है जिसमें प्रचलित दोषों अथवा मूर्खताओं का, कभी-कभी कुछ अतिरंजना के साथ मजाक उड़ाया जाता है।

" किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह का अपमान करना इसका लक्ष्य है; अर्थात व्यक्तिगत आक्षेप-लेख की तरह।7. ड्राइडन अंग्रेजी में एक प्रसिद्ध व्यंग्यकार हैं। उसने व्यंग्य को परिभाषित करते हुए कहा, "किसी व्यक्ति को निर्ममता से टुकड़े कर देने में बहुत फर्क है, और एक व्यक्ति के सर को सफाई से धड़ से अलग करके लटका देने में।" एक सफल व्यंग्यकार अप्रस्तुत और प्रच्छन्न विधान की शैली में अपने भाव व्यक्त करता है। ताकि पाठक स्वतंत्र निष्कर्ष निकाल सके, वह अपने क्रोध को अलंकारिक और सांकेतिक भाषा में व्यक्त करता है। ताकि व्यंग्यकार कला और साहित्य में स्वतंत्र रूप से प्रवेश कर सके, व्यंग्यकार अपने व्यक्तित्व को व्यंग्य से अलग करता है।8. उपरोक्त परिभाषा व्यंग्य और व्यंग्यकार की जिम्मेदारियों को समझाती है। सांकेतिक भंगिमा से एक व्यंग्यकार निर्ममता से विद्रूपताओं का पर्दाफाश करता है। वह अपने व्यक्तिगत राग-द्वेष से दूर रहकर विकृतियों पर तीव्र प्रहार करता है। उसका "व्यंग्य" इस तरह साहित्यिक दर्जा प्राप्त करता है। बर्नार्ड शाँ ने कहा कि दुष्टता और मानवीय दुर्बलताओं को व्यंग्य का लक्ष्य मानते हुए, संसार की मुक्ति सिर्फ मूर्खों को प्रोत्साहन देने के बजाय हास्य द्वारा उन्हें ध्वस्त करने तथा विकृति को विनोद भाव से न स्वीकार करने वालों पर निर्भर करती है।9. बर्नार्ड शॉ कहते हैं कि हास्य द्वारा बुराइयों और कमजोरियों को दूर करने वाली रचना व्यंग्य है। मेरीडिथ के शब्दों में हास्यास्पद का इतना अधिक मजाक उड़ाया जाता है कि उसमें दया और सहानुभूति समाप्त हो जाती है, इससे वह हास्य और व्यंग्य की कोटि में आ जाता है। मेरीडिथ को लगता है कि उपहासस्पद व्यक्ति का निष्ठुर मजाक उड़ाना व्यंग्य है, जिससे पाठक की उसके प्रति रही-सही सहानुभूति समाप्त हो जाती है। वास्तव में, मेरीडिथ भी हास्य को महत्वपूर्ण मानते हैं, लेकिन उसका हास्य सिर्फ मनोरंजन तक नहीं रहता, बल्कि क्रोधित हो जाता है। पश्चिमी लेखक इयान जैक ने व्यंग्य को संक्षिप्त और व्यापक रूप से परिभाषित किया, कहते हैं, "बचाव की इच्छा-शक्ति व्यंग्य को जन्म देती है, कलात्मक बचाव ही व्यंग्य है।"10. समाज की बुराइयों से बचने के लिए एक व्यंग्यकार कलम उठाता है। वर्तमान मनोवैज्ञानिक संदर्भ को स्पर्श करने और विद्रूपताओं को समाप्त करने के लिए, व्यंग्यकार इयान की परिभाषा लिखकर अपने को विद्रूपदाओं से बचाता है। जितने भी पाश्चात्य समीक्षकों और रचनाकारों ने व्यंग्य पर टिप्पणी की हैं, वे सभी एक बात कहते हैंः व्यंग्य का लक्ष्य हमारे आसपास व्याप्त विसंगतियों और विकृतियों पर क्रोधित करना है। सामाजिक सोद्देश्यता और आक्रामकता व्यंग्य में आवश्यक हैं। व्यंग्य, जीवन की सभी विकृतियों, अनाचारों, अवगुणों और पाखण्ड का कलात्मक निषेध है। नकारात्मक लगने वाले व्यंग्य भी सृजनात्मक है। वास्तव में व्यंग्य का मूलाधार सड़ी-गली मान्यताओं, रूढ़ियों में परिष्कार और नवनिर्माण की इच्छा है। यही कारण है कि व्यंग्य की सामाजिक परिष्कार की क्षमता सबसे बड़ी उपादयेता है।

निश्कर्श

पाश्चात्य व्यंग्य समीक्षकों की व्यंग्य संबंधी परिभाषाओं को जानने के बाद, भारतीय व्यंग्य समीक्षकों की व्यंग्य संबंधी धारणाओं को जानना महत्वपूर्ण है। "व्यंग्य वह है जहाँ कहने वाला अधरोष्ठों में हँस रहा हो और सुनने वाला तिलमिला उठा हो", आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा।द्विवेदी ने हास्य को व्यंग्य का उद्देश्य नहीं मानते, बल्कि इसे एक साधन मानते हैं। आज हास्य के बिना व्यंग्य बनाना भी संभव है। आज हास्य की जगह सोद्देश्यता और आक्रामकता व्यंग्य का मूल तत्व है। वास्तव में, व्यंग्य का मूल्य हास्य पैदा करने की क्षमता से नहीं, बल्कि विसंगतियों और विकृतियों पर कितना तेज और गहरा प्रहार करने की क्षमता से निर्धारित होता है।

डॉ. प्रभाकर माचवे ने व्यंग्य को परिभाषित करते हुए कहा कि "मेरे लिए व्यंग्य कोई पोज या अन्दाज, लटका या बौद्धिक व्यायाम नहीं, पर आवश्यक अस्त्र है।"इससे स्पष्ट होता है कि प्रभाकर माचवे ने व्यंग्य को एक आवश्यक हथियार मानते हुए प्रहारात्मक त्वरा की आवश्यकता है। इन्द्रनाथ मदान का कहना है कि "परिवेश के लिए असंतोष व्यंग्य का रूप् धारण करता है।" खरी-खरी सुनना भी कहते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[1]. अतिथि कक्ष (समानधर्मी), पृ0 25
[2]. शोकसभा, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 8
[3]. आत्मलेख, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 53
[4]. शोकसभा, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 28
[5]. आत्मलेख, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 56
[6]. आत्मलेख, कुछ प्रसंग, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 69
[7]. आत्मलेख, विविध प्रसंग, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 74
[8]. देवदार का पेड़, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 57
[9]. आत्मलेख, रवीन्द्र नाथ त्यागी, पृ0 108-109
[10]. हरिशंकर परसाई की दुनिया, डॉ0 मनोहर देवलिया, पृ0 87-88
[11]. प्रेमचन्द के बाद सबसे बड़े गद्य, कान्ति कुमार जैन
[12]. आइडिया ऑफ कामेडी, मेरिडिथ, पृ0 82
[13]. व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई और उनका साहित्य, डॉ0 अर्चना सिंह, पृ0 14
[14]. सटायर, आर्थर पोलार्ड, पृ0 74
[15]. निबन्धों की दुनिया, हरिशंकर परसाई, सं0 रेखा सेठी, पृ0 159
[16]. स्वातंत्र्योŸार हिन्दी कविता में व्यंग्य, शेरभंग गर्ग, पृ0 25
[17]. आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, डॉ0 बरसाने लाल चतुर्वेदी, पृ0 21
[18]. बर्नार्ड शॉ, द क्विन्टेंसेस ऑफ इब्यानिस्म, पृ0 186
[19]. इयान जैक, सटावर-आर्थर पौलैण्ड, पृ0 7
[20]. कबीर, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0 172
[21]. तेल की पकौड़ियाँ, प्रभाकर माचवे, पृ0 5
[22]. हिन्दी की हास्य व्यंग्य विधा का स्वरूप और विकास, इन्द्रनाथ मदान, पृ0 41
[23]. आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य, डॉ0 वीरेन्द्र मेहदीरŸा, पृ0 15
[24]. रिमझिम, डॉ0 रामकुमार वर्मा, पृ0 13
[25]. 6. सीढ़ियों पर धूप में, रघुवीर सहाय, पृ0 257
[26]. स्वातंत्र्योŸार हिन्दी कविता में व्यंग्य, डॉ0 शेरजंग गर्ग, पृ0 27-28
[27]. हिन्दी का स्वातंत्र्योŸार हास्य और व्यंग्य, बालेन्दु शेखर तिवारी, पृ0 61
[28]. सदाचार का ताबीज, हरिशंकर परसाई, पृ0 10
[29]. मेरी श्रेश्ठ व्यंग्य रचनायें : अपनी बात, शरद जोशी, पृ0 6
[30]. मेरी श्रेश्ठ व्यंग्य रचनाएँ (परिचय), श्रीलाल शुक्ल